स्वास्थ्य मन्त्री का दौरा, काम अधूरा दिखावा पूरा

फ़रीदाबाद (म.मो.) दिनांक 21 सितम्बर दोपहर के करीब साढे बारह बजे शहर के मुख्य बादशाहखान अस्पताल में खासी अफ़रा-तफ़री का माहौल था। डॉक्टारों व अन्य स्टाफ़ ने अपनी वर्दी के सफ़ेद कोट पहने थे जो आमतौर पर नहीं पहने जाते। मरीज़ों के बिस्तरों पर बिछी चादरें इतनी साफ़ सफ़ेद कि जैसे आज ही खरीद कर लाई गयी हों। सफ़ाई ऐसी चकाचक जो अन्यथा कभी देखने में नहीं आती। ओपीडी में मरीज़ों की भीड़ सामान्य से बहुत कम पंखे जो कभी नहीं चलते थे आज चल रहे थे। पूछने पर पता लगा कि स्वास्थ्य मंत्री अनिल विज पधारने वाले हैं। मरीज़ों की भीड़ को कम रखने के लिये तुर्त-फुर्त बाहरी मरीज़ों को निपटा दिया गया था।

पौने दो बजे के करीब मन्त्री महोदय पहुंचे। स्वागत करने को आगे बढे पीएमओ से मंत्री जी ने पूछा कि आप डॉक्टर हैं या मरीज़? क्योंकि उन्होंने अपनी वर्दी का सफ़ेद कोट नहीं पहना था, शायद शेष स्टाफ़ से अलग दिखने के लिये। पूर्व सूचना के चलते लगभग सभी व्यवस्थायें ठीक-ठाक पाई गयीं जो सामान्यतया नहीं होती।

एक मरीज़ ने हड्डी विशेषज्ञ डॉक्टर गौड की शिकायत की कि उसकी टूटी हुई टांग का ऑपरेशन करने में उन्होंने एक माह की देरी कर दी। पूछने पर पता लगा कि डॉ. गौड पीएमओ के मना करने के बावजूद 4 दिन की छुट्टी पर चले गये हैं। गुस्साये मंत्री जी ने उन्हें निलम्बित करने के आदेश दे डाले। विदित है कि डॉक्टर साहेबान निलम्बन तो क्या बर्खास्तगी तक की भी कोई खास परवाह नहीं करते। 2-4-6 माह निलम्बित रहने के दौरान पहले आधा और फ़िर पौना वेतन तो मिलेगा ही और बहाल होने के बाद बकाया पूरा वेतन भी मिल जायेगा। निलम्बन के दौरान ये लोग किसी न किसी प्राइवेट अस्पताल में काम करके वेतन से कई गुणा अधिक कमा लेते हैं, वह अलग से।

विदित है कि बीके अस्पताल में कम से कम 5 हड्डी विशेषज्ञों की जरूरत है जबकि यहां कभी भी एक या दो से ज़्यादा नहीं रहे। आज भी यहां डॉ. गौड के अलावा एक और हड्डी विशेषज्ञ ने हाल ही में तैनाती पाई है। लेकिन अब उनका भी तबादला हो चुका है। किसी भी डॉक्टर को अपने मरीज़ों के अलावा अदालतों के भी चक्कर लगाने पड़ते हैं। ऐसे में गौड जैसे डॉक्टर के भाव बढना भी तय हैं। जब काम व मरीज़ ज़्यादा होते हैं तो उसे अपने सुविधा शुल्क के अनुसार मरीज़ चुनने का अधिकार स्वत: मिल जाता है। दिन भर में अपने द्वारा किये गये केसों की गिनती पूरी कर चूकने के बाद कोई यह तो कह नहीं सकता कि उसने काम नहीं किया। जब सरकार को ही डॉक्टरों व स्टाफ़ की पर्याप्त नियुक्तियां करने की चिंता नहीं तो गौड जैसे डॉक्टर तो उसका लाभ उठायेंगे ही।

कुछ दैनिक अखबारों के अनुसार डॉक्टर विनय गुप्ता व डॉ. विरेन्द्र यादव की इस बात के लिये जवाबतलबी की गयी कि उन्होंने नियम-विरुद्ध मरीज़ों को बाहर से दवाई खरीदने को लिखा। 'मज़दूर मोर्चा' द्वारा की गई जांच में पाया गया कि उन्होंने ऐसा कुछ नहीं लिखा था। उन्होंने तो रक्तचाप की वे सामान्य गोलियां लिखी थी जो अस्पताल से हमेशा दी जाती हैं। लेकिन पिछले कुछ दिनों से वे गोलियां स्टोर में हैं नहीं। ऐसे में डॉक्टर अपने घर से गोलियां देने से रहे और मरीज़ अगर इलाज चाहते हैं तो वे सरकारी स्टोर के भरोसे तो बैठे रह नहीं सकते। जाहिर है वे बाज़ार से ही खरीदेंगे। जांच पड़ताल में यह भी पता चला कि अस्पताल में आने वाली 325 दवाइयों में से करीब 110 दवायें अस्पताल स्टोर में नहीं हैं और जब तक वे आयेंगी तब तक कोई और दवायें खत्म हो चुकी होंगी। इस प्रकार यह सिलसिला चलता रहता है और कोई न कोई 100-50 दवायें हमेशा समाप्त ही रहती हैं। कुत्ता काटे के इंजेक्शन तो प्राय: खत्म ही रहते हैं। सरकार के बस में न तो कुत्ते मारने हैं न इनके काटे के इंजेक्शन उपलब्ध कराना।

एक प्रभावकारी मन्त्री के इन कामों के लिये अस्पताल दर अस्पताल घूमने की जरूरत नहीं होती। यदि वह प्रभावकारी है तो ये सब काम वह चंडीगढ स्थित अपने कार्यालय में बैठ कर भी कर सकता है। मन्त्री के यहां दौरे के समय तीनों विधायक-सीमा त्रिखा, मूलचंद शर्मा और विपुल गोयल के अतिरिक्त उपायुक्त तथा अतिरिक्त उपायुक्त भी मौजूद रहे। समझने वाली बात यह है कि जब मन्त्री महोदय खुद ही अस्पताल का मुआयना करने पहुंच गये तो ये पांचों (जनप्रतिनिधि व ज़िलाधिकारी) अस्पताल में क्या करने आये थे? ये सभी लोग मन्त्री के बिना भी अस्पताल का दिन-प्रतिदिन निरीक्षण करने व अस्पताल प्रशासन की नकेल कसने में समर्थ एवं प्राधिकृत हैं। इन अफ़सरों और नेताओं को मन्त्री की हाजिरी भरने तथा उनके आस-पास मंडराने की बजाय ठोस काम करने पर ध्यान देना चाहिये।

विपुल गोयल का काम सबसे 'बढिया' रहा। वे मन्त्री की हाजिरी भरने तो जरूर पहुंचे लेकिन मन्त्री के साथ-साथ वार्डों में घूमने की बजाय बाहर एक तरफ़ छाया में खड़े रहे। वैसे भी उनके घूमने से क्या फ़र्क पड़ने वाला था, इतने लोग जो घूम रहे थे वे क्या कम थे। फ़िर अस्पताल और वह भी सरकारी अस्पताल में मरीज़ों के बीच घूमने से किसी न किसी बिमारी के लगने का खतरा कौन मोल ले?

मन्त्री जी तो दौरा कर गये। बीके अस्पताल अपनी पुरानी लय में वापस आ गया। इसमें कुछ कर पाने की हैसियत न स्थानीय अफ़सरों में है न विधायकों में। मन्त्री जी में भी अगर इतनी लियाकत होती कि वे अस्पतालों की व्यवस्था सुधार पाते तो इन नुमायशी दौरों की कोई जरूरत ही न होती। फ़िलहाल अगले दौरे की प्रतिक्षा रहेगी।

शिक्षा से सरकार ने झाड़ा पल्ला

फ़रीदाबाद (म.मो.) किसी भी कल्याणकारी सरकार के ज़िम्मे मुख्यत: शिक्षा, चिकित्सा व सुरक्षा के काम ही होते हैं अपने नागरिकों के प्रति, शेष तो जनता खुद भी कर लेती है। परन्तु तथाकथित आज़ादी के बाद ज्यों-ज्यों देश आगे बढता गया त्यों-त्यों सरकारे इन तीनों दायित्वों से पल्ला झाड़ती चली गयीं। सुरक्षातंत्र केवल नेताओं एवं विशिष्ट वर्ग के लिये रह गया और शेष जनता को गुंडे-मवालियों के रहमों-करम पर छोड़ दिया गया है। सुरक्षा के नाम पर बढती गयी पुलिस को वर्ग विशेष के इर्द-गिर्द तैनात कर छोड़ा है। यही हाल स्वास्थ्य सेवाओं का है जो आम आदमी की पहुंच से दूर कर दी गयी है।

शिक्षा एक ऐसी चीज़ है जिससे किसी देश-समाज की शक्ति, समृद्धि एवं सम्पन्नता बढती है। परन्तु बीते 30-40 वर्षों में विभिन्न सरकारों ने शिक्षा को रसातल तक पहुंचा दिया है। गुणवत्ता वाली शिक्षा आम आदमी की पहुंच से एकदम बाहर हो गयी है। भारी भरकम बजट खर्च करने के बावजूद सरकारी स्कूलों का ढांचा इस कदर बिगड़ चुका है कि सरकारी स्कूल का चपरासी भी अपने बच्चों को अपने सकूल में नहीं पढाता। वह भी पेट काट कर अपने बच्चों को, क्षमतानुसार किसी न किसी प्राइवेट स्कूल में दाखिल कराता है। इस कड़वी हकीकत को नज़र-अंदाज करके इलाहाबाद हाईकोर्ट का निर्णय आया है कि तमाम उच्चाधिकारी व राजनेता अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों में पढायें। सरकारी स्कूलों में अपने बच्चों को पढाना तो दूर की बात, ये लोग सरकारी स्कूलों में झांकना तक भी पसंद नहीं करते, क्योंकि उनकी हालत झांकने लायक भी नहीं रह गयी हैं। न टॉयलेट हैं, न पीने का पानी, न ढंग की इमारत न पंखे व बिजली, फ़र्नीचर की तो बात ही छोड़ दीजिये। बरसात के मौसम में तो इन स्कूलों तक पहुंचना ही दूभर हो जाता है। किसी तरह पहुंच गये तो वहां बैठने की कोई व्यवस्था नहीं होती। ऐसे में अक्सर छुट्टी घोषित हो जाती है।

ऐसा भी नहीं है कि सरकार स्कूली शिक्षा पर पर्याप्त खर्चा नहीं कर रही। सरकारी स्कूलों में दाखिल प्रत्येक बच्चे पर राज्य सरकार तीन हज़ार रुपये मासिक की औसत से खर्च कर रही है। इतना ही नहीं राज्य सरकार के अलावा केन्द्र सरकार सर्व शिक्षा अभियान के नाम पर सैंकड़ों करोड़ वार्षिक अलग से राज्य को दे रही है। यहां समझने वाली बात यह है कि केन्द्र और राज्य सरकारों ने शिक्षा व्यवस्था में फ़ैले व्यापक भ्रष्टाचार एवं हरामखोरी को समाप्त करने की अपेक्षा सर्व शिक्षा अभियान के नाम से एक नया पाखंड खड़ा कर दिया है। शिक्षा विभाग में बजट का हिसाब किताब तथा भ्रष्टाचार का लेखा जोखा तो पता चल जाता है; जबकि इस सर्व शिक्षा अभियान में तो पता ही नहीं चल पाता कि पैसा कौन खा गया और कैसे? क्योंकि इस 'खाओ पीओ' अभियान में कोई भी कर्मचारी व अधिकारी स्थाई नहीं होता। सब इधर-उधर से अस्थाई रूप से प्रतिनियुक्ति पर या ठेकेदारी आधार पर तैनात होते हैं। जाहिर है ऐसे में न तो कोई रिकार्ड रखा जाता है और न किसी की कोई जवाबदेही होती है। कुल मिला कर शिक्षा के नाम पर यह ऐसा बढिया खाने-पीने का अभियान है जहां कोई किसी को पूछने वाला नहीं है।

सरकार के उक्त करतब देख कर कतई कोई शक नहीं रह जाता कि सरकार का इरादा बच्चों को पढाने का नहीं है। सरकार में बैठे लोगों का तो एकमात्र लक्ष्य यही प्रतीत होता है कि आम जनता को जहां तक संभव हो शिक्षा से वंचित ही रखा जाये और शिक्षा के नाम पर बजट को जैसे-तैसे हड़प लिया जाय, जिस किसी को पढना हो वह प्राइवेट स्कूलों में जाए, जहां लूट खसूट पर कोई लगाम नहीं है। जितना जिसका जी चाहे लूटे लेकिन सरकार चलाने वालों को उनके हिस्से की लूट पहुंचाता रहे।

अभिभावक एकता मंच चुनाव में भी उतर सकता है

मज़दूर मोर्चा ब्यूरो फ़रीदाबाद

अभिभावक एकता मंच के प्रदेश अध्यक्ष ओपी शर्मा ने मंच के सम्मेलन में घोषित किया कि बेशक वे राजनीति व राजनीतिक दलों से कोई नाता नहीं रखते, लेकिन जरूरत पड़ी तो मंच को प्रदेश विधान सभा की तमाम 90 सीटों पर चुनाव लड़ने के लिए तैयार करेंगे।

दिनांक 20 सितम्बर को सेक्टर 10 स्थित राजस्थान भवन में प्रदेश भर से आये मंच के प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुए शर्मा जी ने कहा कि 18 सालों से उनका मंच शिक्षा जैसे मौलिक अधिकार के लिये लड़ता आ रहा है। सरकार अपने सरकारी स्कूलों का बेड़ा गर्क करती जा रही है और प्राइवेट स्कूलों को, हर तरह के कानूनों एवं नियमों का उल्लंघन करके लूट खसूट के लिये प्रोत्साहित करती जा रही है। सरकार के विभिन्न विभाग-'हूडा,' सीबीएसई, हरियाणा सकूल बोर्ड आदि अपने बनाये हुए नियमों तक को लागू करने में कोई रूचि नहीं ले रहे हैं। और तो और शिक्षा विभाग द्वारा बनाई गयी नियमावली तथा 'शिक्षा का अधिकार' अधिनियम की सरेआम धज्जियां उड़ा कर सरकार को मुंह चिढाने वाले प्राइवेट स्कूलों पर वह कोई भी कार्यवाही नहीं कर पाई है।

सम्मेलन में विभिन्न वक्ताओं ने बताया कि सरकार द्वारा उनके विरुद्ध कार्यवाही न करने से स्वत: सिद्ध हो जाता है कि सरकार खुद इनसे मिली हुई है। सरकार चाहे कांग्रेस की रही हो चाहे भाजपा की, नीति सबकी एक ही है। चुनाव के समय तमाम जनप्रतिनिधि वायदा करते हैं कि वे इस मामले में समुचित कार्यवाही करेंगे; लेकिन चुनाव जीतने के बाद सभी प्राइवेट स्कूलों की गोद में जाकर बैठ जाते हैं। बैठें भी क्यों नहीं, चुनाव लड़ने के लिये मोटे-मोटे चंदे तथा रैलियों के लिये बसें तो ये स्कूल ही दे सकते हैं मंच वाले बेचारे क्या देंगे? परन्तु नेताओं की यही सोच अब दुरूस्त करनी है। उन्हें एहसास कराना है कि मंच उन्हें क्या दे सकता है और उनसे क्या छीन सकता है। सम्मेलन में शिरकत करने आई विभिन्न अभिभावक एसोसिएशनों ने अपने-अपने सकूलों द्वारा लूटे गये मुनाफ़े के चौंकाने वाले आंकड़े पेश किये। गुड़गांव के अरावली पाथवे स्कूल का गत वर्ष का मुनाफ़ा था 29 करोड़ रुपये। विदित है कि कोई भी स्कूल बतौर कम्पनी पंजीकृत नहीं है, तमाम स्कूल चैरिटेबल ट्रस्ट के तौर पर पंजीकृत हैं। कम्पनी को मुनाफ़ा कमाने का अधिकार होता है जबकि चैरिटेबल ट्रस्ट को नहीं, यह केवल बिना लाभ-हानि के ही काम कर सकते हैं। जाहिर है ये तमाम शिक्षण संस्थान सारा मुनाफ़ा दो नम्बर में यानी काले धन के रूप में कमा रहे और छिपा रहे है। इसी के चलते ये संस्थान अपने बही खातों का ऑडिट (लेखा-जोखा) नहीं होने देते। अगर सरकार चलाने वाले खुद चोर न हो तो ऑडिट जैसे मौलिक काम के लिये किसी संस्थान से स्वीकृति लेने की जरूरत नहीं है। आयकर विभाग जो आये दिन जगह-जगह छापे मारने का नाटक करता है, एक दिन इनके भी तो बही-खाते देख ले।

अभिभावक मंच का यह सम्मेलन मुख्यत:18 तारीख को प्राइवेट स्कूल मालिकों द्वारा किये गये प्रदर्शन की प्रतिक्रिया स्वरूप बुलाया गया था। बिदित है कि 18 तारीख को शहर भर के तमाम प्राइवेट स्कूलों ने हड़ताल कर न केवल तमाम बच्चों को पढाई से वंचित रखा बल्कि समस्त स्टाफ़ को भी जबरन तपती दोपहर में सड़कों पर जुलूस निकाल कर उपायुक्त कार्यालय के बाहर धरना देने को मजबूर किया। इसी का जवाब देने के लिये इतनी बड़ी संख्या में अभिभावक खुद चल कर राजस्थान भवन पहुंचे थे। हॉल में लगी 800 कुर्सियां कम पड़ गयी। काफ़ी कुर्सियां और मंगाई गयी फ़िर भी काफ़ी लोग खड़े रह गये।

विदित है कि प्राईवेट स्कूलों का विरोध प्रदर्शन मुख्यत: धारा 134 ए के विरोध में था। इस धारा के तहत इन स्कूलों को 25 प्रतिशत ग़रीब बच्चों को अपने यहां दाखिला देना होता है जिनकी फ़ीस सरकार उनको अदा करेगी। बड़ा अजीब मामला लगता है। जब सरकार फ़ीस भरने को तैयार है तो स्कूलों को दाखिला देने में क्यों एतराज है? यह जानने के लिये प्राईवेट स्कूलों के एक प्रवक्ता सुरेश कुमार (ए डी सकूल सेक्टर 16) से बात करने पर उन्होंने बताया कि 134 ए इतनी सरल चीज़ नहीं है। यह स्कूलों व अभिभावकों को घुम्मन-घेरी में डालने वाला यन्त्र है। वर्ष 1995 में भारत सरकार ने एक शिक्षा नियमावली बनाई थी जिसमें धारा 134 के तहत मात्र 3 प्रतिशत विकलांग बच्चों को दाखिला देना था फ़िर 2003 में 134 ए पैदा हो गयी। इसके अनुसार 25 प्रतिशत बच्चों को दाखिला देने का प्रावधान था। इनकी फ़ीस एवं खर्च की वसूली शेष 75 प्रतिशत बच्चों से वसूलने का प्रावधान किया गया। मामला पंजाब एवं हरियाणा हाई कोर्ट पहुंचा तो हाई कोर्ट ने पूछा कि 25 प्रतिशत बच्चों की फ़ीस शेष 75 प्रतिशत बच्चे क्यों और किस आधार पर दें? बहस मुबायसे के बाद यह प्रावधान रद्द हो गया और 25 प्रतिशत बच्चों की फ़ीस सरकार के जिम्मे डाल दी गयी। इसका एक भाग केन्द्र व एक भाग राज्य सरकार अदा करेगी। लेकिन सरकारों द्वारा फ़ीस अदायगी की कोई समय सीमा नहीं रखी गयी। यानी स्कूल वाले फ़ीस का बिल भेजते रहेंगे और सरकारी बाबू जब तक चाहें टरकाते रहेंगे।

मामला हाईकोर्ट में टहलता रहा, कई कमेटियां बनती-बिगड़ती रहीं।

इस बीच तत्कालीन मुख्यमंत्री भूपेन्द्र सिंह हुड्डा ने ग़रीब बच्चों की संख्या 25 प्रतिशत से घटा कर 10 प्रतिशत कर दी। मामला फ़िर हाई कोर्ट पहुंचा। सन् 2014 में हाई कोर्ट ने 25 प्रतिशत बच्चों की फ़ीस सरकार के जिम्मे डाल दी और बच्चों के दाखिले की प्रक्रिया के नियम आदि बनाने को कहा। हरियाणा सरकार ने इस बीच यह भी कहा कि उसके पास अपने (सरकारी) स्कूल हैं जिनमें वह बच्चों को पढा सकती है। परन्तु यह तर्क चला नहीं। हाई कोर्ट के फ़ैसले को लागू करने के बजाये सरकार चली गयी सुप्रीम कोर्ट। इसी अपील को आधार बना कर राज्य के शिक्षा महानिदेशक टी सी गुप्ता ने अप्रैल 2015 में तमाम ज़िला शिक्षा अधिकारियों को पत्र लिख कर 25 प्रतिशत वाले प्रावधान को लागू कराने से रोक दिया। उधर सुप्रीम कोर्ट में जब सरकार को फटकार लगी तो सरकार ने अपनी याचिका वापस लेते हुए खारिज करा ली। दूसरी ओर किसी सक्रिय कार्यकर्ता ने हाई कोर्ट में अवमानना की याचिका डाल दी तो बौखलाई सरकार के शिक्षा महानिदेशक ने अगस्त में पुन: तमाम ज़िला शिक्षा अधिकारियों को पत्र लिख 25 प्रतिशत वाले प्रावधान को लागू कराने को कहा। इस पर तमाम प्राइवेट स्कूलों ने कहा कि उनकी दाखला प्रक्रिया अगस्त माह तक नहीं चला करती। वे तो अप्रैल में ही अपनी सीटें फुल कर लेते हैं।

स्कूल प्रवन्धकों व अभिभावक मंच की इस लड़ाई का कोई तर्कसंम्मत हल निकालने की अपेक्षा सरकार व अदालतों ने तरह-तरह की कमेटियां व उल्टे-सीधे नियम बना कर इसे इस कदर उलझा दिया है कि आसानी से सुलझने के कोई आसार नज़र नहीं आते। इसके चलते मंच संघर्ष तेज़ करने के साथ-साथ इसकी रूपरेखा भी अब बदलने की बात कर रहा है। धरने-प्रदर्शनों व कोर्ट-कचहरी की लड़ाई से हट कर अब राजनीतिक ताकत हासिल करने की दिशा में गंभीरता से विचार चल रहा है।